भाषादर्शन के भूमण्डलीय इतिहास का पुनर्लेखन आवश्यक – प्रो० अशोक एन० अकलूजकर

'पांचवीं शताब्दी के दार्शनिक भर्तृहरि ने भूमण्डलीय भाषादर्शन के इतिहास का पुनर्लेखन आवश्यक और अपरिहार्य बना दिया है। बीसवीं शताब्दी में भर्तृहरि के दर्शन की फिर से प्रतिष्ठा हुई है और इसके आलोक में विश्व को भाषा और व्याकरण के दर्शन के पुनर्लेखन का यह कार्य करना है'। उपर्युक्त विचार प्रो० अशोक एन० अकलूजकर, प्रोफेसर एमेरिटस, एशियाई अध्ययन विभाग, ब्रिटिश कोलम्बिया विश्वविद्यालय, वैंकूवर, कनाडा ने 'काशी व्याख्यानमाला' के अन्तर्गत अपना विशिष्ट व्याख्यन देते हुए व्यक्त किया। उक्त व्याख्यान ३० सितम्बर, २०१६ को भारत अध्ययन केन्द्र, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में केन्द्र तथा इन्दिरा गान्धी राष्ट्रीय कला केन्द्र, क्षेत्रीय केन्द्र, वाराणसी द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित किया गया। अपने कथन का विस्तार करते हुए उन्होंने कहा कि भारत ने शताब्दियों पूर्व दर्शन के उच्चतम शिखर का निर्माण कर लिया था। हमें भाषा और व्याकरण के दर्शन के सामान्य विद्धान्त का विकास भर्तृहरि के दर्शन के आलोक में करना होगा, जिनका जन्म ईसा की पांचवीं शताब्दी में हुआ था। प्रो० अकलूजकर ने कहा कि समकालीन दर्शन विभागों में धर्म के अध्ययन से अपनी दूरी बनाए रखने की प्रवृत्ति का आधार धर्म के अध्ययन और 'फिलासाफी' के अध्ययन में निहित दूरी होने के कारण है। यह मान्यता नई है और इस पर विचार किया जाना आवश्यक है।

सत्र की अध्यक्षता करते हुए जादवपुर विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग के पूर्व अध्यक्ष और विश्वविश्रुत विद्वान प्रो० पी० के० मुखोपाध्याय ने कहा कि एक परंपरा के मूलग्रन्थ को उसी के समान दूसरी परंपरा में उपलब्ध मूलग्रन्थ 'टेक्स्ट' से हमको जोड़ना होगा। इसलिए पहले हमको अपनी संस्कृति को समझना होगा और फिर उसे दूसरी संस्कृति के साथ सम्बद्ध करना होगा।

अतिथियों का स्वागत करते हुए इन्दिरा गान्धी राष्ट्रीय कला केन्द्र, क्षेत्रीय केन्द्र, वाराणसी के परामर्शदाता प्रो० कमलेशदत्त त्रिपाठी ने प्रो० अशोक एन० अकलूजकर और प्रो० पी०के० मुखोपाध्याय इन दो विश्वविश्रुत विद्वानों के अकादमिक अवदानों का विवरण दिया और यह कहा कि काशी शताब्दियों से पाणिनि के व्याकरण तथा भर्तृहरि के भाषादर्शन के अध्ययन का प्रसिद्ध केन्द्र रहा है। बीसवीं शताब्दी में यहीं भर्तृहरि के दर्शन के अध्ययन का पुनः उदय हुआ। अतः काशी व्याख्यानमाला में विश्वविश्रुत विद्वानों के द्वारा यह विचार अत्यन्त प्रासंगिक है।

प्रो० अकलूजकर के व्याख्यान ने एक उत्तेजक बहस की शुरूआत की, जिसमें प्रो० रेवाप्रसाद द्विवेदी, प्रो० गोपबन्धु मिश्र, प्रो० भगवतशरण शुक्ल, डा० विश्वनाथ पाण्डेय और अनेक स्वदेश तथा विदेश से आये युवा-विद्वानों ने भाग लिया। कार्यक्रम का संचालन तथा अतिथियों को धन्यवाद प्रदान प्रो० सदाशिव कुमार द्विवेदी ने किया।